P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 **SHRINKHALA :** VOL-II * ISSUE-VI February-2015
E: ISSN NO.: 2349-980X

राजस्थानी लोकोक्तियों में पर्यावरण विषयक चिन्तन

वेद प्रकाश यादव,
व्याख्याता,
भूगोल विभाग,
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर,
राजस्थान

सारांश

लोकोक्तियाँ लोक साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं। विषय का निचोड़ होने के कारण इनमें गागर में सागर भरने की सामर्थ्य होती है। लोकजीवन के विविध पक्षों–सामाजिक संरचना, रीति–रिवाज, परम्पराएं; पर्यावरण के विविध पक्षों यथा मौसम, वनस्पति, जीव–जन्तु, कृषि–फसलों, पशु–धन, अकाल, सुकाल आदि विभिन्न विषयों का सूक्ष्म अध्ययन कर उसके सार तत्त्व को लोकोक्तियों के माध्यम से जन–जन तक पहुँचाने का कार्य राजस्थान के लोकरचनाकारों ने प्राचीनकाल से किया ह। वृक्षों के फूल, फलों की मात्रा के आधार पर भावी फसल का अनुमान, जन्तुओं की क्रियाओं के आधार पर मौसम का पूर्वानुमान लगाने तथा तदनुरूप अपनी कार्य योजना बनाना यहाँ के किसानों की परम्परा रही है। इस ज्ञान को आमजन तक पहुंचाने में लोकोक्तियाँ सर्वाधिक समर्थ रही हैं। परन्तु आज का शिक्षित वर्ग हमारे पूर्वजों की सतत साधना से संचित इस ज्ञान को काल्पनिक एवं अवैज्ञानिक मानकर इसकी अपेक्षा कर रहा है। आज आवश्यकता है इस ज्ञान के अध्ययन, अवलोकन एवं इसे वैज्ञानिक कसौटी पर कसने की।

प्रस्तुत शोध–पत्र इसी कम में एक प्रयास है। पत्र में तीन राजस्थानी लोकोक्तियों का अध्ययन कर उनकी विषय वस्तु को वैज्ञानिक कसौटी पर परखने तथा उसकी व्याख्या करने का प्रयास किया गया है। प्रथम लोकोक्ति में वृक्षों के फल–फूलों की मात्रा के आधार पर खरीफ फसल की विभिन्न उपजों के भावी उत्पादन का अनुमान, द्वितीय लोकोक्ति में आकाश में पक्षाभ मेघों की उपस्थिति के आधार पर वर्षा का पूर्वानुमान तथा श्रृंगार के आधार पर विधवा स्त्री के पुनर्विवाह का अनुमान किया गया है। इसी प्रकार तृतीय लोकोक्ति में घड़े के पानी के तापमान एवं चीटियों तथा चिड़ियाओं की क्रियाकलापों के आधार पर वर्षा होने का अनुमान किया गया है। पत्र में उक्त तीनों लोकोक्तियों की वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत की गई है।

मुख्य शब्द : लोकोक्तियाँ, लोक साहित्य, पुनर्विवाह

परिचय

राजस्थान एक विशाल राज्य है। क्षेत्रफल की विशालता के साथ ही इसमें धरातल, जलवायु, मिट्टी, वनस्पति, जन्तु, जलसंसाधन आदि की विविधताएं पाई जाती हैं। प्राकृतिक कारकों की विविधता सांस्कृतिक विविधता को जन्म देती है जो इस राज्य के विभिन्न अंचलों के जन–जीवन में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। प्राकृतिक कारकों की विविधता ने यहाँ के निवासियों के भोजन, वस्त्र, आवास, विचार, आदतों, रीति–रिवाज, उत्सव एवं अन्य सांस्कृतिक तत्त्वों पर गहरी छाप छोड़ी है। राजस्थान का 60 प्रतिशत से अधिक भाग मरुस्थल है। यहाँ वर्षा की कमी सर्वविदित है। वर्षा के अभाव में यहाँ जल और जंगल का अभाव होना स्वाभाविक है। फसलें, मानव बसाव, उद्योग बहुत कुछ जल पर निर्भर रहते हैं। अतः जल संरक्षण और जल से सम्बन्धित क्रियाकलाप यहाँ के लोगों के चिन्तन का प्रमुख विषय रहा है। राजस्थान का निवासी जल, जंगल, जीव और जमीन के महत्त्व को भली–भाँति जानता है। वह स्वयं तो इसका संरक्षण करता ही रहा है, साथ ही अपनी भावी पीढ़ियों को भी इनके संरक्षण की सीख देता रहा है। पर्यावरण संरक्षण विषयक चिन्तन की झलक राजस्थानी लोकगीतों, लोक कथाओं, लोकोक्तियों में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

यहाँ के लोक ने अपने चिन्तन के निष्कर्षों को इन लोक साहित्यिक विधाओं के माध्यम से भावी पीढ़ियों को हस्तान्तरित किया है। सदियों से यह ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप से हस्तान्तरित होकर नई जनसंख्या के मन–मस्तिष्क में पर्यावरण संरक्षण का बीज अंकुरित करता रहा है। अनौपचारिक रूप में घर–आँगन, गाँव की चौपाल, दादी–नानी की बातों (कहानियों), लोकगीतों, लोकोक्तियों के माध्यम से यहाँ का बालक/बालिका पर्यावरण

विषयक कौन सी सीख कब ग्रहण कर गया उसे स्वयं इसकी जानकारी नहीं होती। कालान्तर में यही ज्ञान उसकी सांस्कृतिक थाती बन जाता है।

लोकोक्तियाँ राजस्थानी लोक साहित्य की अनमोल धरोहर हैं। अनेक पीढ़ियों के लोक अनुभवों से सिंचित ज्ञान के द्वारा ये समाज का पग–पग पर मार्गदर्शन करती हैं। लोकोक्तियों ने जीवन के हर पहलू को छुआ है। समाजोपयोगी ज्ञान का ये अथाह भण्डार हैं। राजस्थानी लोकोक्तियों में जहाँ एक ओर इस प्रदेश के धरातल, मिट्टी, जलवायु, मौसम, ऋतु, जन्तु, वनस्पति की जानकारी मिलती है ता दूसरी ओर इनके पारस्परिक अन्तसम्बन्धों का भी पता चलता है। लोकोक्तियों के अध्ययन से पता चलता है कि राजस्थानी लोगों ने अपने सूक्ष्म एवं गहन अवलोकन के आधार पर बिना वैज्ञानिक यंत्रों की सहायता के भी उच्चकोटि का पर्यावरणीय ज्ञान प्राप्त कर लिया था। वे विद्यमान प्राकृतिक वनस्पति के फल–फूलों को देखकर भावी फसलों के उत्पादन की संभावनाओं का अनुमान आसानी से लगा लिया करते थे। इसी प्रकार जन्तु एवं वनस्पति के लक्षणों/क्रियाकलापों के आधार पर मौसम का पूर्वानुमान लगाना, किसी माह विशेष की विशेष तिथि की आकाशीय दशाओं के आधार पर भावी मौसम एवं अकाल–सुकाल की स्थिति का पूर्वानुमान लगाना भी यहाँ के लोग बखूबी जानते थे।[1] इस ज्ञान का उपयोग वे अपनी फसल बोने एवं अन्य आर्थिक–सामाजिक कार्यों को सम्पन्न करने हेतु किया करते थे ताकि भावी आर्थिक हानि एवं असुविधाओं से बचा जा सके। यदि हम राजस्थानी लोकोक्तियों में वर्णित ज्ञान की वैज्ञानिक व्याख्या करें तो वे विज्ञान के सिद्धान्तों पर खरी उतरती हैं। यहाँ बानगी के तौर पर कुछ लोकोक्तियाँ प्रस्तुत की जा रही हैं जिससे उक्त बात स्पष्ट हो जाएगी।

आकाँ–नीमाँ बाजरो, कैरड़ियाँ कुपास।
जबर फळैगी जाँटड़ी, मूँग–मोठाँ की आस।।

(स्रातः राजस्थान के अलवर जिले के राठक्षेत्र में प्रचलित कहावत)

राजस्थान के लोगों के जीवन में खरीफ फसल का बड़ा महत्त्व है। असिंचित कृषि इस प्रदेश की कृषि की प्रमुख विशेषता रही है। अतः वर्षा आधारित खरीफ फसल पर यहाँ के पशुधन एवं मानव की निर्भरता स्वाभाविक ह। उक्त कहावत में खरीफ फसल का उत्पादन कैसा होगा, इसका अनुमान विभिन्न वृक्षों, झाड़ियों पर लगे फलों की मात्रा के आधार पर किया गया है। आज भी राजस्थान का किसान इस प्रकार के लक्षणों को आधार बनाकर फसलें उगाता है। इस कहावत में बताया गया है कि यदि आक तथा नीम पर भरपूर फल लगेंगे तो बाजरा; कैर की झाड़ी पर भरपूर फल (टींट) लगेंगे तो कपास तथा जाँटड़ी (खेजड़ी) पर पर्याप्त फल (सांगरी) आएंगे तो मूँग–मोठ का उत्पादन भरपूर होगा। यहाँ फसलों एवं प्राकृतिक वनस्पति के उत्पादनों में सह–सम्बन्ध ज्ञात कर उसे आमजन के हितार्थ लोकोक्ति के माध्यम से पहुँचाने का प्रयास किया गया है ताकि वे इस ज्ञान को आसानी से याद रख सकें तथा फसल उगाने में इस ज्ञान का सदुपयोग कर लाभ प्राप्त कर सकें।

इसी प्रकार भौतिक–सांस्कृतिक पर्यावरण के लक्षणों के आधार पर भावी मौसम एवं सांस्कृतिक मूल्यों के टूटने के पूर्वानुमान की झलक प्रस्तुत करती एक और कहावत :–

तीतर पंखी बादळी, बिधवा काजळ रेख।
वा बरसै वा घर करै, एं मैं मीन ना मेख।।

(स्रोतः राजस्थान के अलवर जिले के राठक्षेत्र में प्रचलित कहावत)

अर्थात् यदि आकाश में तीतर पंखी बादळी (पक्षाभ या पक्षाभ स्तरी मेघ) छायी हों तो वर्षा अवश्य आएगी तथा यदि कोई विधवा स्त्री नेत्रों में काजल डालती है (श्रृंगार करती है) तो वह अवश्य ही पुनर्विवाह करेगी; इन दोनों बातों में कोई सन्देह नहीं है।

उक्त कहावत की प्रथम पंक्ति का प्रथम अंश मौसम से तथा द्वितीय अंश संस्कृति से जुड़ा है। आज भी यह कहावत मौसम विज्ञान के सिद्धान्त एवं राजस्थान के सांस्कृतिक धरातल पर खरी उतरती है।

मौसम विज्ञान के अनुसार आकाश में पक्षाभ/पक्षाभ स्तरी मेघों की उपस्थिति चक्रवात के आगमन की सूचना देते हैं। उष्ण वाताग्र के आते ही वर्षा प्रारम्भ हा जाती है।[2] थोड़े समय बाद सघन काले वर्षा–स्तरी (Nimbo-Stratus) मेघों के साथ घनघोर वर्षा होने लगती है। उक्त कहावत में तीतर पंखी बादली उस स्थान पर चक्रवात के आगमन का संकेत कर रही है, जहाँ कुछ समय बाद उष्ण वाताग्र आने पर, वर्षा प्रारम्भ होने वाली है तथा थोड़े समय बाद ही मूसलाधार वर्षा होना निश्चित है।[3] अतः कहावत मौसम विज्ञान के सिद्धान्तों पर खरी उतर रही है।

राजस्थानी संस्कृति में श्रृंगार केवल सधवा स्त्रियों का अधिकार है। जो केवल पति के लिए किया जाता है। विधवा स्त्री को बहुत संयम एवं सादगीपूर्ण जीवन व्यतीत करना पड़ता है, समाज द्वारा उसके लिए श्रृंगार करना कठोरतापूर्वक वर्जित किया गया है।[4] सामान्यतया विधवाएँ इसे सहजता से स्वीकार करती हैं तथा तदनुरूप अपना आचरण रखती हैं। परन्तु यदि विधवा स्त्री नेत्रों में काजल डाले अर्थात् श्रृंगार करे (यहाँ काजल श्रृंगार का पतीक है) तो इसका आशय है कि वह सामाजिक मर्यादाओं की परवाह नहीं करती उनका उल्लंघन कर रही है। यह उस विधवा के बगावती तेवर का संकेत करता है। वह स्त्री सधवा जैसा जीवन जीना चाहती है। ऐसी परिस्थिति में परिवार व समाज उस संकेत को समझकर या तो स्वयं उसका पुनर्विवाह कर देता है अथवा वह विधवा स्वयं पुनर्विवाह कर लेती है और यदि यह संभव नहीं होता तो वह किसी पुरुष से संबंध स्थापित कर लेती है। लोकजीवन में ऐसे उदाहरण पाये जाना साधारण बात है। उक्त कहावत मौसम विषयक गहन ज्ञान एवं लोक–मर्यादाओं के सूक्ष्म चिंतन पर आधारित होने के कारण आज भी सार्थक प्रतीत होती है। एक अन्य कहावत देखिए –

कळसै पाणी गरम हो, चिड़िया न्हावै धूल।
इंडा ले चींटी चढ़ै, जद बिरखा भरपूर।।

(स्रोतः राजस्थानी कहावत कोश[5])

राजस्थान के जनजीवन में वर्षा का महत्त्व सर्वविदित है। राज्य की अधिकांश जनता कृषि पर निर्भर रहती है और कषि वर्षा पर। वर्षाकाल इस प्रदेश के लिए 'उत्सव काल' है। ग्रामीण क्षेत्रों में वर्षाकाल के आगमन के साथ ही महिलाओं के कंठ से गीतों के स्वर स्वमेव निकल पड़ते हैं। सावन, तीज, वर्षा के गीत लोकगीतों के रूप में गाये जाने की यहा परम्परा रही है। ये गीत कृषक एवं कृषक परिवारों की सारी थकान दूर कर उनमें नूतन आशा एवं उत्साह का संचार कर देते हैं। ज्येष्ठ माह के मध्य से ही वर्षा का इन्तजार प्रारम्भ हो जाता है। वर्षा भरपूर हो इसके लिए यज्ञ, मन्दिरों में भण्डारा जैसे कार्य भी यहाँ के लोक जीवन का हिस्सा रहे हैं। वर्षा के प्रति इस अत्यधिक संवेदनशीलता ने ही यहाँ के आमजन को वर्षा के लिए विशेष चिन्तन, अध्ययन–अवलोकन के लिए प्रेरित किया। यहाँ के लोगों ने जन्तुओं के विविध क्रियाकलापों, नक्षत्र स्थिति एवं अन्य अनेक पर्यावरणीय तत्त्वों का अध्ययन कर उनका वर्षा आगमन, वर्षा की मात्रा आदि से सहसम्बन्ध स्थापित किया। यद्यपि इन ग्राम्य जनों को सांख्यिकी का ज्ञान नहीं था। अतः उनके निष्कर्ष मात्रात्मक विधियों पर आधारित नहीं थे लेकिन फिर भी उन्होंने भावी वर्षा की मात्रा का अनुमान ठीक–ठीक करने में सफलता हासिल कर ली थी। उसी ज्ञान को लोकोक्तियों के रूप में संग्रहीत कर उसे आमजन तक पहुँचाया गया ताकि उसका लाभ समाज को मिल सके। प्रस्तुत लोकोक्ति में भी भरपूर वर्षा होने के संकेतों को वर्णित किया गया है।

मौसम विज्ञान के सिद्धान्त के अनुसार वर्षा वायुमण्डल में विद्यमान आर्द्रता पर निर्भर करती है। वायुमण्डल में जितनी आर्द्रता अधिक होगी उतनी ही अधिक वर्षा होने की संभावना होगी। वायुमण्डल में विद्यमान जल–वाष्प की मात्रा ही आर्द्रता कहलाती है। वायुमण्डल में आर्द्रता अधिक होने पर वाष्पीकरण की दर घट जाती है। घड़े का जल ठण्डा होने के पीछे वैज्ञानिक कारण है। घड़े के महीन छिद्रों से रिसकर जल घड़े की बाहरी सतह पर आ जाता है। बाहरी सतह पर इस जल का वाष्पीकरण होता है, वाष्पीकरण क्रिया में घड़े की ऊष्मा काम आती है। इस कारण घड़े की बाहरी सतह से जल का निरन्तर वाष्पीकरण होते रहने से घड़ा ऊष्मा का परित्याग करता है। फलस्वरूप घड़ा ठण्डा होता रहता है जिससे उसके भीतर भरे हुये जल का ठंडा होना भी स्वाभाविक है। यदि वाष्पीकरण की दर घट जाएगी तो घड़ा ठण्डा होने की क्रिया भी शिथिल पड़ जाएगी जिससे घड़ा कम ठण्डा हो पाएगा। परिणामस्वरूप उसमें रखा जल भी पहले जैसा ठण्डा नहीं हो पाएगा अर्थात् तुलनात्मक दृष्टि से गरम रहेगा। अतः स्पष्ट है कि यदि घड़े में पानी कम ठण्डा (गरम) है तो स्पष्ट है कि वायुमंडल में आर्द्रता अधिक है। आर्द्रता अधिक है तो वर्षा आने की संभावना भी अधिक है।

प्रकृति ने जन्तुओं को बहुत अधिक संवेदनशीलता का गुण दिया है। वे मौसमी परिवर्तनों के प्रति भी अत्यन्त संवेदनशील होते हैं। प्रस्तुत कहावत में चिडिया और चींटी की मौसमी संवेदनशीलता के आधार पर वर्षा आने का पूर्वानुमान लगाया गया है। वर्षा आगमन से पूर्व वायुमण्डल में जलवाष्प की मात्रा बढ़ जाती है। यह बढ़ी हुई जलवाष्प की मात्रा जन्तुओं में बेचैनी का कारण बनती है क्योंकि एक तरफ तो तापमान की अधिकता होने से पसीने अधिक आते हैं। दूसरी तरफ वाष्पीकरण की दर घटने से पसीने सूखते नहीं हैं/बहुत धीमी गति से सूखते हैं। पसीने नहीं सूखने से शरीर ठण्डा नहीं हो पाता जिस कारण शारीरिक बेचैनी बढ़ जाती है। बेचैनी का दूसरा कारण यह भी है कि वायु में जलवाष्प का अनुपात बढ़ जाने से श्वसन में भी वायु के साथ जलवाष्प अधिक मात्रा में ग्रहण की जाती है। जलवाष्प में गुप्त ऊष्मा अधिक होती है। अतः जब जलवाष्प की अधिकता वाली वायु हमारे श्वसन अंगों के सम्पर्क में आती है तो तापीय अधिकता के कारण उन अंगों में भी बेचैनी महसूस की जाती है। इसी कारण उक्त परिस्थिति में चिड़िया भी बेचैन होकर अपने पंख फैलाकर धूल में ही फड़फड़ाने लगती है जिससे हवा लगकर उसका शरीर ठण्डा होता है तथा उसे गर्मी से राहत मिलती है। प्रस्तुत कहावत में इसे धूल में नहाना कहा गया है। इसी प्रकार चींटी को भी वायुमण्डल में विद्यमान जलवाष्प की मात्रा बेचैन करने लगती है इस कारण वह बिल से बाहर अण्डों सहित निकल जाती है तथा किसी ठण्डे स्थान पर अपने अंडों को ले जाकर रख देती है। ताकि गर्मी से अपनी व अपने अण्डों की रक्षा कर सके। चींटियों को वायुमंडलीय आर्द्रता की अधिकता होने से वर्षा का पूर्वानुमान भी हो जाता है। अतः वे अपने अण्डों को ऊंचाई वाले स्थानों पर ले जाती हैं। राजस्थानी लोगों ने चींटी और चिड़िया क क्रियाकलापों, घड़े का पानी ठंडा नहीं होने (तुलनात्मक रूप से गरम होना) तथा वर्षा के आगमन की घटना का अनेक वर्षों तक अध्ययन किया होगा। अध्ययन के निष्कर्ष में उन्होंने वर्षा आगमन एवं चींटी, चिड़िया, घड़े वाली घटनाओं में धनात्मक सह सम्बन्ध पाया और इसी आधार पर उक्त कहावत की रचना हुई। उक्त कहावत की सत्यता को आज भी परखा जा सकता है।

निष्कर्ष

लोकोक्तियाँ राजस्थानी लोक साहित्य की विपुल धरोहर हैं, जिनसे अन्यान्य ज्ञान प्राप्ति के साथ ही पर्यावरण के भौतिक एवं सांस्कृतिक दोनों पक्षों के विविध पहलुओं पर भी पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। नक्षत्रों की स्थितियों, जन्तुओं के क्रियाकलापों, प्राकृतिक वनस्पति के फल–फूल की मात्रा, उसकी पत्तियों का रंग–रूप, कामलता, तिथि विशेष एवं माह विशेष को आकाशीय घटनाएं तथा पवन की गति एवं दिशा आदि का राजस्थान के लोगों ने सूक्ष्म अवलोकन कर इन विभिन्न घटनाओं तथा पर्यावरणीय दशाओं के मध्य सह–सम्बन्ध स्थापित कर लिया था। घटनाओं के पारस्परिक सह सम्बन्धों से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर वे मौसम, फसल, उत्पादन, अकाल–सुकाल आदि के बारे में भविष्यवाणी किया करते थे। इस ज्ञान को लोक साहित्यकारों ने बात, गीत, लोकोक्ति आदि विधाओं के सहारे जन–जन तक पहुँचा

कर उसके जीवन को सुगम बनाने का प्रयास किया। इनमें लोकोक्तियों का अपना विशिष्ट स्थान है।

संदर्भ

1. पाथेय कण, जुलाई 16, 2014 : पाथेय कण संस्थान, जयपुर
2. Singh, Savindra, 2005 : Climatology, Prayag Pustak Bhandar, Allahabad, PP. 227-229
3. Critchfield, H.J., 2002 : General Climatology, Printice Hall of India, New Delhi, PP. 453
4. श्रीमती मंजू शर्मा, 2008 : नारी शोषण और मानवाधिकार, राज. पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, पी.पी. 101
5. राजस्थानो कहावत कोश, 2001 : पंचशील प्रकाशन, जयपुर

प्रमुख शब्द एवं उनके अर्थ

लोकोक्ति 1.	आकां	आक का पौधा
	नीमां	नीम का पेड़
	कैरड़ियाँ	कैर की झाड़ी
	कुपास	कपास का पौधा
	जबर	भरपूर/अधिक मात्रा में
	फळैगी	फल लगेंगे
	जाँटड़ी	खेजड़ी का वृक्ष
	मोठा	मोठ का पौधा
लोकोक्ति 2.	तीतर पंखी	पक्षी के पंखों जैसी आकृति वाली
	बादळी	बादल
	बिधवा	विधवा स्त्री
	काजळ रेख	नेत्रों में काजल लगाना/नेत्रों में काजल की रेखा
	बरसै	वर्षा हो
	वा	वह
	घर करै	विवाह करे (गृहस्थी बसाना)
	एं मैं	इसमें
	मीन ना मेख	दो राय न होना/निश्चि घटित होना
लोकोक्ति 3.	कळसै	घड़े (मटके) में
	पाणी	पानी
	न्हावै	स्नान करे
	धूल	धूल/मिट्टी
	इंडा	अण्डे
	चढै	चढ़ना
	जद	तब
	बिरखा	वर्षा